UGC-CARE Listed ISSN: 2349-4654

नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूजिक वर्ष : 10, अंक : 2, दिसंबर 2022

नारद कृत नारदीय शिक्षा का समय तथा ग्राम एवं मूर्च्छनाओं के संदर्भ

लेखक

शिखा श्रीवास्तव

शोध छात्रा, संगीत विभाग एस.एस.जे. परिसर अल्मोड़ा

सहायक लेखक

डॉ. वन्दना जोशी

सहायक अध्यापक, संगीत विभाग,एस.एस.जे. परिसर अल्मोड़ा

Paper received on : September 15, September 24, October 10, November 7, Accepted on December 1, 2022

सार-संक्षेप

सामवेद का शिक्षा ग्रन्थ 'नारदीय शिक्षा' विविध सांगीतिक अवधारणाओं और सिद्धांतों को स्पष्ट करता है। प्राचीन काल में रचित अनेक शिक्षा ग्रंथों के समान इस शिक्षा ग्रंथ का उद्देश्य भी वैदिक मन्त्रों के उचित उच्चारण, साम के उचित गान, साम-स्वरों के उचित प्रयोग व उनकी गात्र वीणा पर उचित स्थिति आदि की शिक्षा प्रदान करना है। नारदीय शिक्षा ग्रंथ के विश्लेषणात्मक अध्ययन यह स्पष्ट होता है कि भारतीय संगीत के ऐतिहासिक विकासक्रम के ज्ञान हेतु, नारदीय शिक्षा का विशेष महत्त्व है तथा शास्त्र जिज्ञासुओं के लिए यह ग्रन्थ अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ में श्रुति पर विस्तृत वर्णन नहीं किया गया है। प्रामाणिकता हेतु अनेक ग्रंथों से तथ्यात्मक सामग्री एकत्र कर अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत प्रपत्र शास्त्रीय ग्रंथों के अध्ययन तथा कतिपय विद्वानों के साथ संबंधित विषय पर वैचारिक मंथन के उपरांत निर्मित किया गया है। शोध प्रपत्र को लिखने में जो प्रविधि प्रयुक्त हुई है वह ऐतिहासिक व सैद्धान्तिक प्रविधि के अंतर्गत आती है। प्रस्तुत शोध-पत्र के माध्यम से ग्रन्थ में निहित आवश्यक घटकों का सम्यक विवेचन करते हुए ग्रन्थ की वृहदता एवं विशिष्टता का परिचय करवाने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्द–नारदीय शिक्षा, मूर्च्छना, ग्राम, श्रुति, सामवेदीय स्वर

शोध-पत्र

भारतीय संगीत की ऐतिहासिकता गहन अध्ययन करने पर सर्वप्रथम् वैदिक काल में ही भारतीय संगीत से संबद्ध विभिन्न तत्वों के प्रमाण प्राप्त होते हैं। प्राचीन मनीषियों द्वारा संगीत के प्रयोगात्मक पक्ष को संरक्षित एवं व्यवस्थित करने हेतु संगीत के विविध स्वरूपों तथा नियमों को बद्ध कर ग्रन्थों में वर्णित करने का अप्रतिम कार्य किया गया है। शास्त्रों में वर्णित उक्त शास्त्रबद्ध नियम आधुनिक काल में विभिन्न पाण्डुलिपियों, प्रतिलिपियों तथा ग्रन्थों के रूप में प्राप्त होती है। ऐसे ही सांगीतिक तत्वों एवं तथ्यों पर आधारित एक अति प्राचीनतम ग्रन्थ है 'नारद कृत' नारदीय शिक्षा। 'नारदीय शिक्षा' शिक्षा ग्रंथों का अप्रतिम ग्रंथ माना जाता है। यह ग्रंथ सामवेद का शिक्षा ग्रंथ है। प्राचीन कालीन भारतीय सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक व्यवस्थाओं का बोध करने वाले साहित्य का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि 'नारद' का विशेष स्थान रहा है। भारतीय संस्कृति में कई नारद है–एक सन्त (मुनि), एक गन्धर्व तो एक धार्मिक, सांस्कृतिक ग्रन्थों के रचयिता। एक मुनि नारद जिन्होंने सामगान, पुराण एवं संहिताओं की रचना की। एक नारद जिन्होंने नारदीय शिक्षा, संगीत मकरन्द की रचना की तथा एक नारद का उल्लेख संवादवाहक के रूप में भी हुआ है। ''संगीत के दृष्टिकोण से नारद को दो भिन्न-भिन्न रूपों में प्रतिष्ठा प्राप्त थी–1. शिक्षाकार के रूप में, 2. गन्धर्व के रूप में। प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में अनेक स्थानों पर नारद को किसी विशिष्ट मूर्छना में निबद्ध वीणा के साथ वादन करते हुए वर्णित किया गया है तथा तुम्बुरु, वशिष्ठ, व विश्वावसु नामक गन्धर्वों के साथ उनका उल्लेख किया गया है।''[1] इस प्रकार पुराणों में भी अनेक स्थानों पर नारद को गंधर्व कहा गया है। नारद को ब्रह्म का पुत्र भी कहा गया है। विद्या एवं ज्ञान की देवी सरस्वती के अतिरिक्त नारद ही ऐसे प्रमुख व्यक्तित्व दिखते हैं जिनका उल्लेख सदा वीणा के साथ पाया जाता है। नारद महत्ती वीणा के अविष्कार तथा वीणा के साथ चित्रित एक सन्त के रूप में जाने जाते है। अर्थववेद में नारद को ऐतिहासिक तथा पौराणिक भविष्यद्रष्टा एवं सिद्ध पुरुष कहा गया है–**गान्धर्वं नारदादिभ्यः प्रत्तमादौ स्वयम्भुवा।। विधिवन्नारदेनाथ पृथिव्यामवतारितम।।** अर्थात स्वयंभू (ब्रह्मा) ने नारद आदि को गांधर्व का उपदेश किया तथा नारद ने उसे पृथ्वी पर विधिवत अवतारित किया। इस प्रकार ज्ञात होता है कि नारद संगीत के आचार्य ही नहीं थे अपितु भूलोक में गांधर्व अर्थात संगीत के प्रवर्तक भी माने गए हैं।''[2] नारदीय शिक्षा के काल के विषय में विद्वानों में मतान्तर दिखता है। मनीष डंगवाल अपनी पुस्तक नारदीय शिक्षा में संगीत के अनेक विचार इस प्रकार व्यक्त करते हैं–''प्राचीन भारतीय संस्कृत साहित्य की विडम्बना रही है कि प्रायः सभी प्राचीन ग्रंथों में उनके रचनाकार अथवा

उनके रचनाकाल का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। नारदीय शिक्षा ग्रन्थ भी इसी श्रेणी का ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ के मूल रचनाकाल का वर्णन नहीं किया गया है। अतः इस ग्रन्थ के रचना काल का बोध करना अत्यंत कठिन हो गया है।''[3] नारद आचार्य भरत के पूर्ववर्ती आचार्य रहे हैं यद्यपि नारद के काल के विषय में भिन्न-भिन्न विद्वानों के भिन्न मत प्राप्त होते हैं। आधुनिक शिक्षाविद एम.आर. गौतम ने ग्राम राग का विस्तृत उल्लेख करते हुए नारदीय शिक्षा ग्रंथ को 200 ई. पू. का ग्रंथ माना है तथा प्रो. एम.आर. गौतम के मतनुसार–"Nardiya Shiksha, one of the earliest works on muisc ascribed to about 200 B.C., has a definition of gram raga as given by the commentator."[4]

ठाकुर जयदेव सिंह भारतीय संगीत की इतिहास में प्रो. रामकृष्ण कवि का उद्धरण देते हुए कहते हैं–'प्रो. रामकृष्ण कवि ने मतंग का काल लगभग नवीं शती का माना है, नारदीय शिक्षा इससे पूर्व का अवश्य ही है। सामवेदीय गान का इसमें प्रचुर वर्णन दिया गया है। इससे यह भरत का पूर्ववर्ती जान पड़ता है। ऐसा लगता है इसका मुख्य अंश लगभग ईसा पूर्व छठीं शती तक बन गया था और बाद में इसमें कुछ अंश 1-2 शती ई. तक जोड़े गए। तब से यह ग्रंथ इसी रूप में चला आ रहा है।''[5] नारद का समय ईसा की 6वीं शताब्दी ई. माना जाता है। नारदीय शिक्षा की रचना का समय ठीक-ठीक निर्धारण करना दुष्कर है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इसका मुख्य अंश लगभग ईसा पूर्व छठी शती तक बन गया था।

''नारद कृत नारदीय शिक्षा एक प्राचीनतम ग्रन्थ है।'' कालिकारक, कपिवक्त्र, पिशुना आदि नारद के ही अभिधान है। अथर्ववेद में नारद सिद्ध पुरुष एवं भविष्यद्रष्टा है, 'मैलिय संहिता' में एक गुरु है। 'ऐतरेय ब्राह्मण' में हरिश्चन्द्र के पुरोहित है। 'सामविधान ब्राह्मण' में वृहस्पति के शिष्य है तथा 'छान्दोग्योपनिषद्' में उन्हें सनत कुमार के साथ संज्ञा दी गई है।''[6]

प्राचीन काल में वेदों के आधार पर अनेकानेक शिक्षा ग्रंथ जैसे–याज्ञवल्क्य शिक्षा, पाणिनीय शिक्षा, सामवेदीय, गौतमी शिक्षा, माण्डुकी शिक्षा तथा नारदीय शिक्षा आदि ग्रंथों की रचना हुई। यद्यपि, प्राचीन कालीन शिक्षा ग्रंथों में से अनेक ग्रंथ आधुनिक काल में भी प्राप्त होते हैं तथापि सभी शिक्षा ग्रंथों में संगीत संबंधी तत्त्व प्राप्त नहीं होते हैं परन्तु उल्लिखित कतिपय शिक्षा ग्रंथों में सांगीतिक तत्त्व प्राप्त होते हैं। उदाहरणार्थ–याज्ञवल्क्य शिक्षा में उदात्तादि स्वर तथा गंधर्व के षड्जादि स्वरों का सामंजस्य स्थापित किया गया है साथ ही माण्डुकी शिक्षा में तीन प्रकार की वृत्तियाँ, साम गायकों द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले सप्त स्वर तथा इन सप्त स्वरों का विविध जीवों की ध्वनियों से संबंध स्थापित किया गया है। प्राचीन काल में इन प्राप्त शिक्षा ग्रंथों में नारद रचित नारदीय शिक्षा का अपने सांगीतिक तत्वों के महत्व के कारण एक विशिष्ठ स्थान है। नारदीय शिक्षा, प्राचीन काल में रचित अनेक शिक्षा ग्रन्थों में से एक है। यह ग्रन्थ दो भागों में विभक्त है, प्रत्येक भाग में आठ कण्डिकाएँ है तथा श्लोकों की संख्या लगभग 238 है। प्रथम भाग को प्रथमाष्टक एवं द्वितीय भाग को द्वितीयाष्टक कहा गया है। इस ग्रन्थ में सामवेद के स्वरों व वर्णों के उच्चारण, मात्रा, सप्त स्वर तथा साम गान में प्रयुक्त की जाने वाली गात्र वीणा के समुचित प्रयोग की शिक्षा का वर्णन प्राप्त होता है। आधुनिक काल में इस ग्रन्थ की प्राप्त होने वाली प्रायः सभी प्रतिलिपियों में अध्याय (कण्डिका) की समाप्ति पर इसके रचनाकार का नामोल्लेख नहीं किया गया है जैसा कि प्रायः सभी प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त होता है।'' संगीत विशारद नामक पुस्तक में ग्राम रागों का उल्लेख करते हुए कहते हैं–इस ग्रंथ में सामवेदीय स्वरों को विशेष महत्त्व देते हुए सात ग्राम रागों का वर्णन किया गया है, जिनके नाम इस प्रकार है–षाडव, पंचम, मध्यम, षडज ग्राम, साधारित, कैशिक मध्यम, मध्यम ग्राम।''[7]

नारद ने नारदीय शिक्षा में साम संगीत व साम स्वरोच्चार का ही मुख्य रूप से उल्लेख किया है तथापि प्रथम में गान्धर्व के तत्वों का भी विस्तृत वर्णन किया है–**बड़जऋषभेगान्धारो मध्यमः पञ्चमस्तथा। धैवतश्च निषादश्च स्वराः सप्तेह सामसु।।**[8]

अर्थात् षडज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पच्चम, धैवत तथा निषाद साम में प्रयुक्त होने वाले सात स्वर है। शिक्षा ग्रंथों में से नारदीय शिक्षा में भी इन सात स्वरों का उल्लेख किया गया है, परन्तु वहाँ उन्हें गान्धर्व के स्वर माना गया है तथा साम के स्वरों का उल्लेख करते हुए–कुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मन्द्र तथा अतिस्वार संज्ञाओं का वर्णन किया गया है। नारदीय शिक्षा में श्रुति पर अधिक चर्चा नहीं की गई है। इस ग्रन्थ में श्रुति संख्या का उल्लेख प्राप्त नहीं होता परन्तु पाँच श्रुति जातियों का वर्णन अवश्य किया गया जिनका विकास क्रम नान्यभूपाल के समय तक होता रहा। इस ग्रन्थ मे श्रुति से अधिक स्वर को महत्त्व दिया गया है परन्तु स्वरों के सूक्ष्म अथवा गेप रूपों का उल्लेख नहीं किया गया है। नारदीय शिक्षा में शुद्ध सप्त स्वरों के अतिरिक्त साधारण स्वरों–अंतर गान्धार तथा काकली निषाद का भी वर्णन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ में तीन ग्रामों का उल्लेख प्राप्त होता है किन्तु नारद ने इन ग्रामों की श्रुति-स्वर-व्यवस्था का वर्णन नहीं किया है। ''नारद को गान्धार ग्राम का प्रयोक्ता कहा गया है, नारद की सम्मति में ग्रामरागों का प्रयोग लौकिक विनोद के लिए न होकर स्तुति या यज्ञ में होना चाहिए।''[9] नारदीय शिक्षा में वर्णित स्वरों के देवताओं के उल्लेख स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षाकार को षडज व मध्यम ग्राम के मूल अंतर पंचम स्वर को श्रुत्युत्कर्ष व अपकर्ष का बोध था। इस आधार पर स्पष्ट कहा जा सकता है कि आचार्य नारद को षडज व मध्यम ग्राम का पूर्ण ज्ञान था। इस तथ्य से यह भी सिद्ध हो जाता है कि यद्यपि नारद ने श्रुतियों की संख्या का उल्लेख नहीं किया है तथापि उन्होंने भी एक सप्तक में बाईस श्रुतियाँ तथा दोनों ग्रामों में श्रुति-स्वर-व्यवस्था, परवर्ती विद्वानों के समान ही मानी थी।

शिक्षाकार ने नारदीय शिक्षा में तीन प्रकार की मूर्च्छनाओं का उल्लेख किया है–ऋषि, पितृ तथा देव मूर्च्छना। इन तीन प्रकार की मूर्च्छनाओं के अर्न्तगत ही नारद ने सात-सात (कुल इक्कीस) मूर्च्छनाओं का नाम उल्लेख किया है। नारदीय शिक्षा में मूर्च्छनाओं का सैद्धान्तिक क्रमगत विवेचन–**सप्तस्वरास्त्रयोग्रामा मूर्द्धमास्त्वेक विंशतिः। तानाएकोनपञ्चाश-दित्येतत्स्वर मण्डलम्।**[10]

उनकी यह मान्यता मूर्च्छनाओं की स्वतन्त्र परिभाषा तो नहीं है लेकिन इससे यह विदित होता है कि वह तीनों ग्रामों की सात-सात मूर्च्छनाएँ मानकर–उनके नामों का उल्लेख करते हैं। प्रत्येक ग्राम के प्रत्येक स्वर को आधार मानकर सात मूर्च्छनाएँ बनाना, यही भरतादि अन्य विद्वानों के मूर्च्छनाओं का आधार माना गया है। ''नारद, भरत और अन्य सभी परवर्ती विद्वानों ने जिन तान प्रकारों का उल्लेख किया है उनका सम्बंध औडव-षाडव रूपों से है। इसलिए उन्हें औड़विता और षाडवित। तानें

भी कहते हैं। इसी षाड़व-औड़वकरण के जो नियम बनाए गए है उनके अनुसार दोनों ग्रामों की तानों की संख्या भी निर्धारित की गई।''[11]

नारदोक्त ऋषि मूर्च्छनाएँ ही षडज ग्रामिक मूर्च्छनाएँ है परन्तु ऋषि मूर्च्छनाओं के अन्तर्गत ही नारद ने, मध्यम ग्राम की दो मूर्च्छनाओं– सौविरी और हृष्यका का नामोल्लेख कर दिया है जो क्रमशः मध्यम व पंचम स्वर की मूर्च्छनाएँ है। आचार्य नारद ने स्वलिखित ऋषि मूर्च्छनाओं का आरोही क्रम में वर्णन किया है। ऋषि मूर्च्छनाओं के समान ही, परवर्ती विद्वानों के अनुसार, पितृ मूर्च्छनाएँ ही मध्यम ग्रामीय मूर्च्छनाएँ है। उनके नामों में पर्याप्त अन्तर है। नारद ने यद्यपि इक्कीस मूर्च्छनाओं का उल्लेख किया है तथापि उनका स्वरूप वर्णन नारदीय शिक्षा में प्राप्त नहीं होता। नारद कृत नारदीय में सात ग्राम रागों की चर्चा की गई है। नारद द्वारा सात ग्राम रागों को परवर्ती विद्वान भरत मुनि, मतंग मुनि आदि ने भी महत्व दिया है। इन्हीं ग्राम रागों के स्वरों आदि का स विस्तार वर्णन कुडमियामलाइ के शिलालेखों में भी प्राप्त होता है।

प्राचीन कालीन इन प्राप्त ग्रन्थों में नारद रचित नारदीय शिक्षा का अपना विशिष्ट स्थान है। प्रायः सभी शिक्षा-ग्रन्थों में वैदिक साहित्य के पठन व उच्चारण सम्बन्धी शिक्षा के उल्लेख प्राप्त होते हैं, परन्तु नारदीय शिक्षा का वैशिष्ट्य यह है कि सामवेद से सम्बद्ध होने के कारण इस ग्रन्थ में वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के अतिरिक्त उनके गान सम्बन्धी तत्वों का भी उल्लेख किया गया है। अतः इस ग्रन्थ में प्राप्त होने वाले सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि इसमें वैदिक संगीत के अतिरिक्त लौकिक संगीत की भी चर्चा प्राप्त होती है। साम स्वरों के उच्चारण, स्वर की प्रधानता, गान के गुण-दोष आदि के उल्लेख, समय की सीमा में बढ़ नहीं है। नारद ने सम्पूर्ण ग्रन्थ की अन्तिम कण्डिका में शिक्षार्थी तथा आचार्य के द्वारा, आवश्यक रूप से व्यव्हारित किये जाने योग्य आचार-व्यवहार का भी वर्णन किया है। यह सभी तत्व आधुनिक कालीन विद्यार्थी व आचार्य के लिए मान्य है।''आधुनिक काल में नारदीय शिक्षा में निहित तत्वों का बोध कराने वाली अनेक प्राचीन प्रतिलिपियाँ मिलती हैं। यह सभी प्रतिलिपियाँ पृथक-पृथक काल में विभिन्न व्यक्तियों द्वारा रची गयी हैं तथा भिन्न भिन्न स्थानों से प्राप्त हुई हैं।''[12] इसी शृंखला में आधुनिक काल में इस ग्रन्थ की प्रतिलिपियों पर आधारित कुछ पुस्तकें अथवा ग्रन्थ भी प्राप्त होते हैं। उक्त प्रतिलिपियाँ विभिन्न ग्रंथालयों तथा अनुसंधान केंद्र-भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टिट्यूट पूना, एशियाटिक सोसाइटी बॉम्बे, ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टिट्यूट मैसूर, ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टिट्यूट बड़ौदा आदि में संरक्षित हैं तथा नारदीय शिक्षा पर आधारित कुछ प्रकाशित पुस्तकों में भट्ट शोभाकर की टीका सहित नारदीय शिक्षा, Usha R. Bhise Naradiya Shiksha–Narad Muni, श्री राम प्रसाद त्रिपाठी द्वारा रचित शिक्षा संग्रह आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

संगीत विषय में सम्पुष्ट शोध-अध्ययन हेतु प्राचीन ग्रंथ व उनमें वर्णित संगीत विषयक अवधारणाएँ एवं सिद्धांत अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। सामवेद का शिक्षा ग्रन्थ 'नारदीय शिक्षा' विविध सांगीतिक अवधारणाओं और सिद्धांतों को स्पष्ट करता है। नारदीय शिक्षा ग्रंथ के विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय संगीत के ऐतिहासिक विकासक्रम के ज्ञान हेतु, नारदीय शिक्षा का विशेष महत्व है तथा शास्त्र जिज्ञासुओं के लिए यह ग्रन्थ अत्यंत महत्वपूर्ण है किसी भी अन्वेषण में तथ्य संकलन हेतु प्राचीन उपलब्ध ग्रंथों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। निष्कर्षतः इस ग्रन्थ के विश्लेषणात्मक अध्ययन के उपरांत यह कहा जा सकता है कि सर्वप्रथम नारदीय शिक्षा ग्रन्थ में ही श्रुति-जाति, सप्त-वैदिक एवं सप्त लौकिक स्वर, ग्राम, मूर्छना, ग्रामराग, गान गुण-दोष आदि सांगीतिक विषयों के वर्णन प्राप्त होते हैं। इस ग्रन्थ में श्रुति पर विस्तृत वर्णन नहीं किया गया है। यद्यपि नारद द्वारा श्रुतियों की संख्या का उल्लेख नहीं किया गया है तथापि संभवतः ग्रंथकार ने भी एक सप्तक में बाइस श्रुतियाँ तथा दोनों ग्रामों में श्रुति स्वर व्यवस्था, परवर्ती विद्वानों के समान ही मानी है। नारदीय शिक्षा ग्रन्थ में ग्रंथकार ने वीणाओं पर वृहद् चर्चा करते हुए सप्त स्वरों की स्थापना हेतु दो प्रकार की वीणा– दारवी (जो की काष्ठ से निर्मित होती है), तथा गात्र वीणा (मानव हथेली। गात्र वीणा को साम गायकों की वीणा माना गया है और सामगायक उँगलियों के माध्यम से स्वरों को प्रदर्शित करते थे,अतः इस पद्धति का वर्तमान से पारस्परिक संबंध स्पष्ट होता है। आधुनिक कालीन संगीत में प्रचलित हाथों द्वारा ताल को प्रदर्शित करने की सशब्द व निशब्द क्रिया की पद्धति को वैदिक गात्र वीणा के संबद्ध माना जा सकता है। माण्डूकी शिक्षा के अतिरिक्त और कई शिक्षा-ग्रन्थ हैं, उनमें संगीत विषय का नहीं के बराबर है। संगीत-सम्बन्धी विषयों का सबसे अधिक विवेचन नारदीय शिक्षा में हुआ है ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. भट्ट शोभाकर, नारदमुनि–नारदीय शिक्षा, श्री पीताम्बर पीठ संस्कृत परिषद, दतिया, मध्य प्रदेश, पृ. सं. 64
2. लाठ मुकुन्द, दत्तिलम, (1988), मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ. सं. 2
3. डंगवाल मनीष, (2005), नारदीय शिक्षा में संगीत, प्रथम संस्करण, राज पब्लिकेशन, पृ. सं. 63
4. Gautam R.M. (1993),Evolution of Raga and Tala in Indian Music, Gautam Munshiram Manoharlal, New Delhi, Page No.62
5. सिंह जयदेव ठाकुर, (2016), भारतीय संगीत का इतिहास, तृतीय संस्करण, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. सं. 106
6. 'काव्य' सिंह कीर्ति लावण्य, (2014), भारतीय संगीत ग्रन्थ वर्ण्य-विषय विश्लेषण, कनिष्क पब्लिशर्स, नयी दिल्ली , पृ. सं. 31
7. बसन्त, (2002), संगीत विशारद, संगीत कार्यालय हाथरस, पृ.सं. 472
8. त्रिपाठी राम प्रसाद, शिक्षासंग्रह, अथर्ववेद, माण्डूकी शिक्षा, श्लोक सं 8, पृ. सं. 382
9. नारद भरत भट्ट शोभाकर नारदीय शिक्षा, श्री पीताम्बर पीठ संस्कृत परिषद, पृ. सं. 5
10. भट्ट शोभाकर, नारदीय शिक्षा, श्री पीताम्बर पीठ संस्कृत परिषद, दतिया म.प्र., द्वितीय कण्डिका, श्लोक सं. 4, पृ. सं. 7
11. चौधरी रानी सुभाष,(2002), संगीत के प्रमुख सिद्धान्त, कनिष्क पब्लिशर्स, दिल्ली, पृ. सं. 65
12. डंगवाल मनीष, (2005), नारदीय शिक्षा में संगीत, प्रथम संस्करण, राज पब्लिकेशन, पृ. सं. 63